श्री अरविन्द के अनुसार सच्ची एवं वास्तविक शिक्षा का अवलोकन

डॉ० आश्वती वर्मा
प्राचार्या, नजरूल हसन टीचर्स टेनिंग कॉलेज, सोनीहार, खगड़िया

सार

अंत:करण एवं आत्मा में समुचित संबंध स्थापित कर सके। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा को बालक के चारों स्तरों चित्त, मानस, बुद्धि और अन्तर्ज्ञान का अधिक से अधिक विकास करना चाहिए। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में कुछ भाव व प्रवृत्तियाँ होती हैं। शिक्षा का कार्य है कि वह तर्क तथा अंत:करण का विकास करते हुए इन प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाए। इस कार्य में चित्त अधिक सहायता नहीं दे सकता लेकिन मानस के द्वारा यह कार्य सफलतापूर्वक किया जा सकता है। मानस सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से यह कार्य कर सकता है। संस्कृति विहीनता, अमानवीयता और अजनवीकरण के भाव से हर कीमत पर बचना होगा।ईश्वरीय चेतन शक्ति को धारण कर ईश्वरीय गुणों से विभूषित होना ही शिक्षा का चरण लक्ष्य है। व्यक्तित्व वैज्ञानिक भावना और आध्यात्मिक चेतना का संगम था, उसी प्रकार उनका समाज दर्शन भी लौकिक और पारलौकिक, भौतिक और आध्यात्मिक व्याख्याओं का समन्वय है।

शब्द कुँजीः अन्तर्ज्ञान, अंतःकरण, आध्यात्मिक, बौद्धिक, दिव्यता, आत्मसिद्धि, आत्मज्ञान, प्रगतिशील चेतना
Recived : 14/5/2026 https://doi.org/10.5281/zenodo.21341222 Aceptance: 30/5/2026

प्रस्तावनाः

श्री अरविन्द के अनुसार सच्ची एवं वास्तविक शिक्षा वही है जो व्यक्ति तथा बालक की छिपी हुई शक्तियों के विकास में सहायक हो तथा व्यक्ति के जीवन, अंत:करण एवं आत्मा में समुचित संबंध स्थापित कर सके। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा को बालक के चारों स्तरों चित्त, मानस, बुद्धि और अन्तर्ज्ञान का अधिक से अधिक विकास करना चाहिए। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में कुछ भाव व प्रवृत्तियाँ होती हैं। शिक्षा का कार्य है कि वह तर्क तथा अंत:करण का विकास करते हुए इन प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाए। इस कार्य में चित्त अधिक सहायता नहीं दे सकता लेकिन मानस के द्वारा यह कार्य सफलतापूर्वक किया जा सकता है। मानस सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से यह कार्य कर सकता है। अरविन्द के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में एक सामान्य मानस के अलावा एक अतिमानस भी होता है। शिक्षा वही है जो इस अतिमानस का विकास करे क्योंकि अतिमानस ही मनुष्य और ईश्वर के मध्य संबंध स्थापित करता है। श्री अरविन्द शिक्षा की दार्शनिक व आध्यात्मिक व्याख्या करते हुए कहते हैं कि मनुष्य आंतरिक रूप से एक आत्मा तथा ईश्वर की चेतन शक्ति का विकास करें। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति ईश्वर की इस चेतन शक्ति को अपने में धारण करने योग्य बन सकता है। अत: ईश्वरीय चेतन शक्ति को धारण कर ईश्वरीय गुणों से विभूषित होना ही शिक्षा का चरण लक्ष्य है। आदर्शवादी होने के नाते श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन आध्यात्मिक संबंध, ब्रह्मचर्य तथा योग पर आधारित है। उनका विश्वास था जिस शिक्षा में उक्त तीनों तत्व सम्मिलित होंगे। उससे मानव का पूर्ण विकास होना निश्चित है। उनके अनुसार मानव में केवल शारीरिक आत्मिक ही नहीं अपितु उसका बौद्धिक, मानसिक, ब्रह्म संबंधी, विशेष मस्तिष्क संबंधी तथा उच्च आध्यात्मिक अस्तित्व भी होता है। उसमें ईश्वर

को पहचानने की शक्ति भी होती है। अत: सच्ची शिक्षा वह शिक्षा है जो बालक के सामने स्वतंत्र वातावरण प्रस्तुत करें तथा उसकी रुचियों के अनुसार उसकी क्रियात्मक, बौद्धिक, नैतिक तथा सौन्दर्यात्मक शक्तियों को विकसित करके उसके आध्यात्मिक विकास में सहायता प्रदान करें।

अत: सच्ची और वास्तविक शिक्षा वह है जो मानव की अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को विकसित करके उसे सफल बनाने में सहायता प्रदान करें तथा प्रत्येक व्यक्ति में उपस्थित दिव्यता के अंश को प्रकट करने का अवसर प्रदान करें। वे कहते हैं मन को कोई ऐसी चीज नहीं सिखाई जा सकती जो प्राणी की आत्मा में पहले से विद्यमान न हो इस प्रकार मनुष्य जितनी पूर्णता पाने में समर्थ है, वह केवल उसके अन्दर स्थित आत्मा की सनातन पूर्णता की अभिव्यक्ति है। अत: शिक्षा एक उन्मूलन है, रहस्य है, आत्मसिद्धि, आत्मज्ञान, प्रगतिशील चेतना, साधना और प्रक्रिया है। शिक्षा की अवधारणा का अर्थ अरविन्द के लिए व्यापक है। वह कहते हैं शिक्षा सिर्फ सूचनाओं का एकत्रीकरण नहीं है। सूचनाएँ ज्ञान की नींव नहीं हो सकती है। वे अधिक से अधिक वह सामग्री हो सकती हैं जिसके द्वारा जानने वाला अपने ज्ञान की वृद्धि कर सके अथवा वह बिन्दु है जहाँ नई खोजों को निकालना प्रारम्भ किया जाए। वह शिक्षा जो अपने को ज्ञान देने तक सीमित रखती है, शिक्षा नहीं है।

अरविन्द और शिक्षा:

अरविन्द ने कहा है, 'सच्ची शिक्षा को मशीन से बना हुआ सूत नहीं होना चाहिए, अपितु इसको मानव के मस्तिष्क तथा आत्मा की शक्तियों का निर्माण अथवा जीवन उत्कर्ष करना चाहिए।' अरविन्द के अनुसार, 'सूचनाओं का संग्रह मात्र शिक्षा नहीं है। सूचनाएँ ज्ञान की नींव नहीं हो सकतीं। वे अधिक से अधिक वह सामग्री हो सकती हैं, जिनके द्वारा जानने वाला अपने ज्ञान की वृद्धि कर सकता है अथवा वह बिन्दु हैं, जहाँ से ज्ञान को आरम्भ किया जाए या नई खोजों को निकालना प्रारम्भ किया जाए। वह शिक्षा, जो अपने को ज्ञान देने तक सीमित रखती है, शिक्षा नहीं है।' अरविन्द के अनुसार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो आधुनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करे तथा बालकों को सभ्य नागरिक बनाएँ ।

अरविन्द घोष ने धर्म, नैतिकता, राष्ट्रीयता, राजनैतिक तथा शिक्षा सम्बन्धी पुनर्निर्माण तथा सामाजिक एकता के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किए हैं। जिस प्रकार श्री अरविन्द का व्यक्तित्व वैज्ञानिक भावना और आध्यात्मिक चेतना का संगम था, उसी प्रकार उनका समाज दर्शन भी लौकिक और परलौकिक, भौतिक और आध्यात्मिक व्याख्याओं का समन्वय है। अरिविन्द के सामाजिक चिन्तन में धर्म और विज्ञान का, आदर्श और यथार्थ का, पूर्व और पश्चिम का अनूठा समन्वय दिखाई देता है।

सृष्टि का स्वरूप:

अरविन्द के अनुसार परम सत् की प्राप्ति की अभिव्यक्ति ही सृष्टि है। वस्तुत: एक छोर पूर्ण ज्ञान है तथा दूसरे छोर पर ज्ञान शून्यता है। अज्ञान इन दोनों के मध्य आता है। सृष्टि इसी अज्ञान के क्षेत्र में आती है। जब परमसत् की चित्त शक्ति परमसत् की लीला (आह्लाद) के कारण जगत में अभिव्यक्त होती है तो उसे सृष्टि कहते हैं। चूँकि सृष्टि परमसत् की चित्त शक्ति की ही अभिव्यक्ति है इसलिए यह भ्रामक न होकर सत् की अभिव्यक्ति है। सृष्टि का कारण परमसत् आह्लाद या लीला है, इसलिए सृष्टि आह्लादपूर्ण भी है। किन्तु सृष्टि सीमित अर्थ में ही सत् व आनन्द रूप है।

अस्तित्व सम्बन्धी सिद्धांत:

अरविन्द के अस्तित्व सम्बन्धी सिद्धांत में भौतिकता तथा आध्यात्मिकता दोनों का समन्वय मिलता है। उनके अनुसार भौतिक रूपों का विकास तभी सम्भव है जबकि उनमें आध्यात्मिक तत्त्व मौजूद हों। इस प्रकार अरविन्द अपने इस सिद्धांत में ब्रह्माण्ड तथा परमात्मा दोनों को समुचित महत्त्व देते हैं। इसी कारण उनके अस्तित्व सम्बन्ध ी सिद्धांत को पूर्ण अद्वैतवादी अथवा सांश्लैषिक सिद्धांत कहा जाता है।

मानव का स्वरूपः

अरविन्द के अनुसार मानव का वह रूप वास्तविक नहीं है जो कि इन्द्रियों द्वारा प्राप्त होता है। अरविन्द के अनुसार मानव स्वरूप के दो पक्ष हैं–उच्चतर पक्ष तथा निम्नतर पक्ष । उच्चत्तर पक्ष जीवात्मा है जो कि मानव की केन्द्रीय सत्ता है जबकि निम्नत्तर पक्ष के दो भेद हैं– बाह्य पक्ष तथा आन्तरिक पक्ष। आन्तरिक पक्ष चैत्य पुरुष तथा बाह्य पक्ष शरीर है। अरविन्द के अनुसार निम्नतर पक्ष का मानव ही विकास प्रक्रिया का मानव है, जबकि उच्चतर पक्ष विकास से परे है।

पुनर्जन्मः

अरविन्द के अनुसार अभी तक विकास प्रक्रिया मानस स्तर तक पहुँच चुकी है और अतिमानस के स्तर में प्रवेश के लिए आतुर है। लेकिन मानव एक ही जन्म में अतिमानस के स्तर को प्राप्त नहीं कर सकता है, अतएव इसके लिए जीवात्मा का पुनर्जन्म आवश्यक है।

कर्म सिद्धांतः

अरविन्द का कर्म सम्बन्धी विचार परम्परागत विचार से भिन्न है। अरविन्द के अनुसार, केवल कर्म सिद्धांत की व्याख्या नहीं की जा सकती है। कर्म नियम यंत्रवादी है। अतएव इससे आध्यात्मिक तत्त्व (आत्म) की व्याख्या करना सही नहीं है। उनके अनुसार, आध्यात्मिक शक्ति तो स्वयं इस नियम को दिशा देती है। कर्म नियम स्वयं आत्म पर आश्रित है, न कि आत्म पूर्णतया कर्म से संचालित होता है।

पूर्ण अद्वैत योगः

अरविन्द के अनुसार, चूँकि विकास प्रक्रिया मानस स्तर तक पहुँच चुकी है और अतिमानस के स्तर को प्राप्त करने के लिए निरन्तर विकास की ओर अग्रसर है, किन्तु इस विकास की गति धीमी है । अतएव इसके लिए आवश्यक है कि हमारी चेतना का केन्द्र बाह्य न होकर आन्तरिक हो। इसके लिए योग की आवश्यकता है। अरविन्द के योग को पूर्ण अद्वैत योग इसलिए कहा जाता है क्योंकि अरविन्द के योग का पालन सभी व्यक्ति सुगमता से कर सकते हैं। वे योग का लक्ष्य अनात्म–आत्म का भेद नहीं मानते वरन् अनात्म की आत्म रूप में पहचान मानते हैं। अरविन्द के अनुसार, योग का लक्ष्य भौतिक स्तर का निषेध करना नहीं है वरन् इन्हें भी आध्यात्मिक रूप में रूपांतरित करना है।

अरविन्द के सृष्टि सम्बन्धी विचारः

अरविन्द के अनुसार सृष्टि परमसत् की आह्लादपूर्ण अभिव्यक्ति है। सृष्टि परमसत् का अवतरण है। अरविन्द कहते हैं कि वस्तुतः एक छोर पर पूर्ण ज्ञान है तथा दूसरे छोर पर पूर्ण ज्ञानशून्यता है। अज्ञान का क्षेत्र इन दोनों के बीच है। इसी कारण अज्ञान का फैलाव भी अधिक है। यह अज्ञान ज्ञान नहीं है क्योंकि ईश्वरीय चेतना या परात्म की चेतना जैसा नहीं है और न ही पूर्णतया ज्ञानशून्य है। सृष्टि इसी अज्ञान के क्षेत्र में आती है। अरविन्द के अनुसार जब परात्म अज्ञान में निमज्जित या प्रविष्ट हो जाता है वही सृष्टि है अर्थात् सत् का अज्ञान के क्षेत्र में अवतरित होना ही सृष्टि है। अरविन्द कहते हैं कि अज्ञान के क्षेत्र में अवतरित होना उसकी बाध्यता नहीं है, वरन् आनन्द की अभिव्यक्ति है। यदि वह ज्ञान के क्षेत्र में सृष्टि करता है तो वह उच्चत्तर सृष्टि होती है जिसे केवल ज्ञानी द्रष्टा ही देख सकते थे जबकि जिस सृष्टि की बात अरविन्द कर रहे हैं वह ज्ञानी तथा अज्ञानी दोनों प्रकार के जीवों की सृष्टि है। यह निम्नतर सृष्टि है जो परात्म द्वारा अज्ञान के क्षेत्र में अवतरित होकर ही हो सकती है।

अरविन्द के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन :

अरविन्द ने बाल–केन्द्रित शिक्षा पर बल दिया है। उनके मतानुसार शिक्षक मात्र सहायक और पथ प्रदर्शक है। इन्होंने शिक्षा का माध्यम मातृभाषा बनाये जाने पर विशेष बल देकर उन शिक्षण विधियों के अपनाने का सुझाव दिया जो स्वतंत्र वातावरण निर्मित कर बालक को सहानुभूतिपूर्वक उसकी रुचियों और उसकी प्रकृति के अनुसार विकास के अवसर प्रदान कर सकें।

प्रो. रमन बिहारी लाल का यह कथन सर्वथा सत्य है कि–'शिक्षा के क्षेत्र में धार्मिक शिक्षा, राष्ट्रीयता की शिक्षा और अन्तर्राष्ट्रीयता की शिक्षा पर बल देकर अरविन्द

ने देश को वर्तमान तथा भविष्य के लिए तैयार करने का कार्य किया है। आज उनकी यह बात सभी को मान्य है।'

डॉ. एन. आर. स्वरूप सक्सेना का मत है कि– 'अरविन्द का शिक्षा दर्शन, आध्यात्मिक आस्था, ब्रह्मचर्य तथा योग पर आधारित होते हुए आध्यात्मिक प्रगति का परिचायक है। यद्यपि अरविन्द पर पाश्चात्य दर्शन का प्रभाव रहा फिर भी उनकी महानता ने इसको सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया। उनका दर्शन भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर ले जाता है।'

डॉ. वी. आर. तनेजा के शब्दों में अरविन्द का शिक्षा–दर्शन लक्ष्य की दृष्टि से आदर्शवादी, उपागम की दृष्टि से यथार्थवादी, क्रिया की दृष्टि से प्रयोजनवादी तथा महात्त्वाकांक्षा की दृष्टि से मानवतावादी है। हमें इस दृष्टिकोण को शिक्षा में अपनाना चाहिए।' अरविन्द ने प्रकृतिवादियों तथा प्रयोजनवादियों की भाँति बाल–केन्द्रित शिक्षा पर बल दिया और शिक्षक को केवल निर्देशक, सहायक तथा पथ–प्रदर्शक के रूप में स्वीकार किया। ये विचार आज आधुनिक मनोविज्ञान की दृष्टि से सर्वथा प्रासंगिक है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1996 में अरविन्द के शैक्षिक विचारों को स्वीकार करते हुए कहा गया है कि 'इस समय शिक्षा की औपचारिकता पद्धति और देश की समृद्ध और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं के बीच एक खाई है, जिसे पाटना आवश्यक है। आधुनिक टेक्नोलॉजी की धुन में यह नहीं होना चाहिए कि नई पीढ़ी भारतीय इतिहास और संस्कृति के मूल से ही कट जाए। संस्कृति विहीनता, अमानवीयता और अजनवीकरण के भाव से हर कीमत पर बचना होगा।

निष्कर्ष :

सच्ची और वास्तविक शिक्षा वह है जो मानव की अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को विकसित करके उसे सफल बनाने में सहायता प्रदान करें तथा प्रत्येक व्यक्ति में उपस्थित दिव्यता के अंश को प्रकट करने का अवसर प्रदान करें। सच्ची व जीवित शिक्षा केवल वह है जिसके द्वारा बच्चे की छिपी हुई शक्तियों का विकास होता है और उसे जीवन, राष्ट्र की आत्मा एवं मानवता की आत्मा का मस्तिष्क से उचित संबंध जोड़ने में सहयोग प्राप्त होता है। वास्तविक शिक्षा व्यक्ति के मस्तिष्क, आत्मा, विवेक तथा बुद्धि को उचित मार्गदर्शन करती है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो आधुनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करे तथा बालकों को सभ्य नागरिक बनाएँ ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. शर्मा, डॉ0 रामनाथ (2003), राष्ट्रधर्म दष्टा श्री अरविन्द, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ।
2. टण्डन, डॉ० उमा (2008), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आलोक प्रकाशन, लखनऊ।
3. पाण्डेय, रामशकल (2012), शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. माथुर, एस0एस0 (2010), शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. गुप्त, लक्ष्मी नारायण (2012), महान पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षाशास्त्री, कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद।
6. Aurobindo, Sri (2005), The Life Divine, Pondicherry: Lotus press,
7. Thakur, Bimal Narayan (2004), Poetic Plays of Sri Aurobindo, Northern Book Centre
8. Sharma, Ram Nath (1991), Sri Aurobindo's Philosophy of Social Development, Atlantic Publishers
9. Sri Aurobindo and European Philosophy,
10. Aurobindo, Sri (May 2009). The Life Divine.